सम्पादकीय

2021 अप्रैल में फिर से देश में तालाबन्दी होगी, ऐसी कल्पना नहीं थी। मार्च में लगने लगा था कि धीरे-धीरे स्कूल भी खुल पाएँगे, परन्तु दूसरी लहर के कारण पुनः लॉकडाउन हुआ और आगे का समय फिर से पूर्णतः अनिश्चित हो गया। बीते सवा साल के लम्बे कोरोना काल ने स्वास्थ्य, रोज़गार, आजीविका और शिक्षा जैसे पहलुओं को गहनता से प्रभावित किया। इस पूरे दौर में स्कूल बन्द ही रहे। बच्चे मानो अपने घरों में लगभग बन्द से हो गए। स्कूल बन्द हैं और दोस्तों से मुलाक़ात एवं खेलना भी बन्द है। उनकी आज़ादी पर तो पूरा अंकुश है ही, पर इसके साथ-साथ बहुत-से बच्चों ने निकट से इस बीमारी और इसके तनाव को भी महसूस किया है। कईयों ने विस्थापन और विपन्नता के चलते भूख का भी सामना किया है। इस दौर में बचपन मानो सिमटकर रह गया है।

बच्चों के लिए स्कूल एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके बन्द होने से बच्चों की शिक्षा और उनका पूरा बचपन प्रभावित है। स्कूल बच्चों के लिए केवल पढ़ने-पढ़ाने की ही नहीं बल्कि अपने हमउम्र और बड़े दोस्तों से मिलने की, एक दूसरे से बातचीत करने, खेलने और घर से निकलने की भी जगह है। स्कूल में कई मौक़े ऐसे होते हैं जहाँ बच्चे पूरी तरह आज़ाद होते हैं। तनावों और टोकाटाकी से मुक्त, चाहे वह स्कूल तक साथ-साथ आने-जाने का समय हो, या मध्याह्न भोजन का, या फिर साथ-साथ पानी पीने जाने या खेलने का समय हो, स्कूलों के बन्द होने ने पूरे समाज को यह काफ़ी अच्छी तरह से महसूस कराया है कि स्कूल बच्चों की शिक्षा के लिए ही नहीं बल्कि उनके मानसिक, शारीरिक और सामाजिक विकास के लिए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

स्कूलों के बन्द होने ने बच्चों को किस-किस तरह प्रभावित किया है, इसपर हमारे देश और पूरे विश्व में कई अध्ययन हुए हैं। जैसे अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का एक अध्ययन दर्शाता है कि अधिकांश बच्चे जो सीख चुके थे उसे भी, वे काफ़ी हद तक भूल चुके हैं। वे उतना भी नहीं कर पा रहे जितना पिछले मार्च लॉकडाउन के समय तक कर पाते थे। प्राथमिक कक्षाओं में हर स्तर पर ऐसा हुआ है। जो सीखा था उसे भूलकर पीछे जाने से बच्चों के ड्रॉपआउट होने की सम्भावनाएँ बढ़ सकती हैं।

तालाबन्दी के दौरान बच्चों की पढ़ाई जारी रखने के लिए सरकारों, स्वयंसेवी संस्थाओं, शिक्षकों ने कई वैकल्पिक तरीक़े प्रयोग करके देखे, जैसे– ऑनलाइन शिक्षण, समुदाय के साथ मोहल्ला कक्षाएँ, कई समूहों में घरों में पढ़ाई, आदि। इस तरह के बहुत प्रयास अलग-अलग ढंग, ढाँचों व विधियों के उपयोग से किए जा सकते हैं। इनकी सम्भावनाओं, इनमें क्या हासिल हो सकता है व इन तक बच्चों की पहुँच की सीमाओं पर भी कई शोध हुए हैं। इन शोधों में– बच्चों, शिक्षकों व पालकों– तीनों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर यही समझ आता है कि यह सभी अलग-अलग ढंग से आधे-अधूरे उपाय हैं। इन्हें कुछ समय के लिए तो उपयोग कर सकते हैं पर ये स्कूल का विकल्प नहीं हैं। लेकिन इन अनुभवों से सीखने में शिक्षक और बच्चों की भूमिका के बारे में जो सीखा गया है, उसकी मदद आगे कक्षा व स्कूल में अन्तःक्रिया रचने में लेनी होगी।

स्कूल कब पूरी तरह खुलेंगे, यह अभी कहना मुश्किल है। लेकिन यह तो है ही कि जब भी स्कूल खुलेंगे तब बच्चों की भावनात्मक, बौद्धिक और मानसिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए ही शिक्षण समेत स्कूल की सभी प्रक्रियाओं के बारे में सोचना होगा। स्कूल को ख़ुद को इसके लिए तैयार करना होगा कि कई बच्चों के साथ इनमें से कई पहलुओं पर नई तरह से और काफ़ी शुरुआती स्तर से काम करना पड़ सकता है। और इसके लिए बच्चों को या उनके अभिभावकों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

पाठशाला के इस अंक में कक्षा अनुभव और शिक्षणशास्त्र पर बहुत सारे लेख हैं। शिक्षणशास्त्र खण्ड में शामिल चार लेखों में एक लेख ***पढ़ने का सफ़र बनाम सक्रिय साक्षरता का सफ़र*** अनिल सिंह ने लिखा है। इसमें पढ़ना सीखने की प्रक्रिया के एक मॉडल की व्याख्या को प्रस्तुत किया गया है। इस व्याख्या के अनुसार पढ़ने की पूरी प्रक्रिया में पाठक चार अलग-अलग चरणों से गुज़रता है और हर इस चरण में वह अलग भूमिका निभाता है। लेख में इन चरणों और हर चरण में पाठक द्वारा निभाई जाने वाली भूमिकाओं के बारे में विस्तार से बातचीत है।

मीनू पालीवाल का लेख ***लेखन ग़लतियाँ और उनका विश्लेषण*** स्कूल में लिखना सिखाने पर है। वे बताती हैं कि स्कूल में लिखना-पढ़ना सिखाने के दौरान सिर्फ़ शुद्धता पर ज़ोर रहता है और ऐसे में बच्चों का स्वतंत्र लेखन बाधित होता है। वे लिखने के सन्दर्भ में स्कूल में अपनाए जाने वाले तरीक़ों का संक्षिप्त वर्णन देते हुए बताती हैं कि किस तरह ये तरीक़े मददगार न होकर लिखना सीखने को बाधित ही करते हैं। वे लिखना सिखाने में ऐसे मसले जिनको शिक्षक को जानना चाहिए, आगाह भी करती हैं कि शिक्षक बच्चों को लिखना सिखाने के जो भी तरीक़े काम में लें, उनका अवलोकन और समीक्षा करते रहें और उनमें ज़रूरी बदलाव के लिए हमेशा तैयार रहें।

शिक्षणशास्त्र में शामिल तीसरा और चौथा लेख पाठ्यपुस्तक के पाठों पर कक्षा में किए गए काम पर आधारित है। तीसरे लेख, ***'सुनीता की पहिया कुर्सी': पाठ की समझ और उसकी प्रक्रिया*** की लेखिका मधु रावत हैं। लेख कहता है कि किसी पाठ को पढ़ाने से पहले शिक्षक को उसके बारे में गहरी समझ बनाने की ज़रूरत है। बच्चों को अपने आसपास के इंसानों और उनकी पहचान के प्रति संवेदनशील बनाने का काम टेक्स्ट के ज़रिए कैसे हो सकता है, लेख इसका भी उदाहरण प्रस्तुत करता है।

'नन्हा फ़नकार' और सीखने के प्रतिफल अनीता ध्यानी द्वारा लिखा लेख है। यहाँ लेखिका ने पाठ योजना कैसे बनाई, कैसे अपने शिक्षण कार्य को दिनों में विभाजित किया, क्या गतिविधियाँ कीं, इनके लिए कितना समय निर्धारित किया, क्या सामग्री उपयोग में ली और आकलन कैसे किया, इस पूरी प्रक्रिया में उनकी अपनी क्या समझ बनी, आदि का सिलसिलेवार ब्योरा प्रस्तुत किया है।

परिप्रेक्ष्य खण्ड में मुकेश मालवीय द्वारा लिखी एक कहानी ***घर जाने की पूरी छुट्टी*** को शामिल किया गया है। यह कहानी स्कूल के प्रति बच्चों के लगाव को सामने रखती है। लेखक कहते हैं कि बड़े शायद ही इसपर विश्वास करें। लम्बे समय तक स्कूल बन्द होने से अब बच्चों को स्कूल याद आने लगा है। उनका मन करता है कि वे स्कूल वैसे ही जाएँ जैसे पहले जाते थे।

विमर्श खण्ड में शामिल लेख ***सिद्धान्त बनाम व्यवहार*** अनवर हुसैन का है। लेखक सीखने-सिखाने के बारे में कार्यशालाओं में साझा किए गए सिद्धान्त कक्षाओं में इस्तेमाल करने पर किस तरह की चुनौतियाँ आती हैं, और उनसे कैसे रूबरू हुआ जा सकता है, इसपर विस्तार से चर्चा करते हैं।

हमारा प्रयास रहा है कि पत्रिका में स्कूल और कक्षा अनुभव से जुड़े लेखों की संख्या बढ़े। इस अंक में कक्षा अनुभव पर आधारित सात लेख शामिल किए गए हैं।

अलका तिवारी का लेख ***बच्चे, कहानियाँ और बातचीत*** बहुस्तरीय कक्षा में कहानियों पर किए गए काम के अनुभव की प्रस्तुति है। लेख कहता है कि ठीक से उपयोग की गई कहानियाँ बच्चों को खुलकर बातचीत करना, प्रश्न पूछना, अपनी राय देना, जैसे अभ्यासों के मौक़े दे सकती हैं।

कक्षा अनुभव पर केन्द्रित दूसरा लेख ***किताबों पर बातचीत*** है। कमलेश चन्द्र जोशी किताबों की विषयवस्तु पर बच्चों के साथ अपनी बातचीत के अनुभव का विवरण प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुभव के निहितार्थ यह दिखाते हैं कि बच्चों को नियमित रूप से किताबों को पढ़ने के मौक़े देने से वे अच्छी तरह से पढ़ना सीखते हैं। पढ़ना सीखने में टेक्स्ट का सन्दर्भ बनाने से व उसे बच्चों के सन्दर्भ में रखने से उन्हें पढ़ने की शुरुआत में आसानी होती है और पढ़ना अक्षर-अक्षर जोड़कर शब्द पढ़ाना नहीं है वरन् अर्थ निर्माण कर सीखना है।

अगले लेख ***पढ़ने-लिखने की प्रक्रियाओं में बाल डायरी*** में मंजू नौटियाल ने पढ़ना-लिखना सिखाने की प्रक्रियाओं में आने वाली समस्याओं और इनसे उबरने में बाल डायरी कैसे मददगार हो सकती है, इस बारे में चर्चा की है। उनका कहना है कि डायरी बच्चों को अपनी इच्छा से, अपने द्वारा सोची गई, अपनी पसन्द की बात अपने लिए लिखने का मौक़ा देती है।

जब बच्चों ने मापी दोस्ती नीतू सिंह का लेख है। लेख में, नीति दस्तावेज़ों में जीवन्त पुस्तकालय व सुरुचिपूर्ण पुस्तकों की स्कूल में अनिवार्यता के बावजूद इनकी अनुपस्थिति व बच्चों के लिए इसकी

अनुपलब्धता पर चिन्ता दर्शाई गई है। वे कहती हैं, पुस्तकालय के प्रति आकर्षण व किताबों से बच्चों का जुड़ाव साज-सज्जा से नहीं, परन्तु बच्चों के साथ पुस्तक के सन्दर्भ में हुई अन्तःक्रिया पर आधारित होता है।

कक्षा अनुभव का अगला लेख संगीता फरासी का ***पढ़ना-लिखना और दीवार पत्रिका*** है। इसमें वे पढ़ना-लिखना सिखाने के तरीक़ों में दीवार पत्रिका का सार्थक उपयोग करने के उनके द्वारा किए गए प्रयासों का विस्तार से वर्णन करती हैं। इससे स्वतंत्र अभिव्यक्ति जो सभी से साझा हो, एक दूसरे का लिखा पढ़ने की प्रेरणा मिलती है। इस तरह के काम से बच्चों में बहुत बदलाव आते हैं व हर कक्षा के लिए वह पढ़ने की घण्टी रखने का सुझाव देती हैं।

श्रीदेवी का लेख ***पैकिंग कवर (रैपर) और पढ़ना-लिखना*** एक कक्षा अवलोकन पर आधारित है। यह एक शिक्षिका द्वारा पढ़ना-लिखना सीखने के माहौल को सहज बनाने के लिए की गई कोशिश के बारे में बताता है। लेख दर्शाता है कि बच्चों के परिवेश को, उनकी क्रियाओं को, समझने से कक्षा प्रक्रियाओं को अर्थपूर्ण बनाने में काफ़ी मदद मिलती है और इसी वजह से बच्चे इनमें जुड़ पाते हैं एवं मशग़ूल होकर सीख पाते हैं।

सम्पूर्णानन्द जुयाल का लेख ***सीखने की राह में पुस्तकालय का संग*** स्कूल में पुस्तकालय की ज़रूरत को रेखांकित करता है और एक स्कूल में पुस्तकालय को नए सिरे से व्यवस्थित करने के लिए शिक्षक व बच्चों द्वारा मिलकर किए गए प्रयासों का विस्तार से वर्णन करता है। लेख दर्शाता है कि बच्चों को ज़िम्मेदारी देने से वे किताबों की सार सँभाल भी करते हैं और उनसे एक रिश्ता भी बनाते हैं। लेख पुस्तकालय की किताबों को कैसे उपयोग में लाया सकता है, क्या विभिन्न गतिविधियाँ की जा सकती हैं, इसका भी वर्णन करता है।

पुस्तक चर्चा खण्ड में दो किताबों ***स्कूल की अनकही कहानियाँ और प्यारी मैडम*** की समीक्षा प्रस्तुत की गई है और समीक्षक हैं प्रभात। ***स्कूल की अनकही कहानियाँ*** एकलव्य द्वारा प्रकाशित की गई है और इसमें स्कूली जीवन के इर्द-गिर्द रची गई तीन कहानियाँ शामिल हैं। एकलव्य द्वारा प्रकाशित ***प्यारी मैडम*** कहानी पत्र शैली में लिखी गई है जिसमें एक बालिका अपनी मैडम को गाँव की परिस्थितियों के बारे में पत्र लिखती है।

इस बार का साक्षात्कार ***उस दिन से आज तक रुकी नहीं हूँ*** शिक्षिका रीता मंडल से पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर ने किया है। शिक्षिका ने अपनी शिक्षा व शिक्षक बनने की यात्रा, कोरोना काल में शिक्षण कार्य को लगातार जारी रखने के प्रयासों, ऑनलाइन शिक्षण व मोहल्ला कक्षाएँ संचालित करने की कोशिशों और शिक्षा के क्षेत्र में किए गए अन्य उल्लेखनीय कार्यों के बारे में विस्तार से बताया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में शुरुआती कक्षाओं में भाषा और गणित की बुनियादी क्षमताओं के विकास पर काफ़ी ज़ोर दिया गया है। बच्चों द्वारा इन बुनियादी क्षमताओं को हासिल करना महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आगे की कक्षाओं में सीखना-सिखाना इनपर ही निर्भर करता है। इस अंक का संवाद ***बुनियादी साक्षरता और बुनियादी, संख्यात्मक और अन्य गणितीय ज्ञान*** विषय पर था।

इस वर्ष 2021 से इस पत्रिका के साल में चार अंक प्रकाशित होंगे। हमने ***पाठशाला*** के स्वरूप में पाँचवें अंक से बदलाव शुरू किया था। पत्रिका का यह अंक और इसके लेख कैसे लगे, यह हमें बताएँ और इसे बेहतर बनाने के लिए सुझाव दें।

पाठकों की प्रतिक्रिया के लिए पिछले अंक से हमने ***पाठक चश्मा*** शुरू किया है। इस अंक में छठवें व सातवें अंक के लेखों पर कुछ टिप्पणियाँ शामिल हैं। आगामी अंकों के लिए आपके लेखों के साथ ***पाठक चश्मा*** के लिए इस अंक पर टिप्पणियों की हमें प्रतीक्षा रहेगी।

सम्पादक मण्डल